दैनिक जागरण
जिससे मन को शांति मिले, वही सच्चा अध्यात्म है

झूठ के प्रयोग

इससे हास्यास्पद और कुछ नहीं कि कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी पर तो यह आरोप लगा रहे हैं कि वह बिना सोचे-समझे कुछ भी बोल रहे हैं, लेकिन वह खुद भी यही काम करने में लगे हुए हैं और इस क्रम में सच-झूठ की भी परवाह नहीं कर रहे हैं। वह न केवल नए-नए झूठ गढ़ रहे हैं, बल्कि अपने पुराने झूठ पर भी टिके हुए हैं। ऐसा लगता है कि वह इससे अवगत नहीं कि झूठ के पैर नहीं होते और इसीलिए अब वह यहां तक कहने लगे हैं कि प्रधानमंत्री मोदी ने सेना में काम करने वाले लोगों के पैसे खुद चोरी करके अनिल अंबानी के खाते में 30 हजार करोड़ रुपये डाल दिए। पहले वह अनिल अंबानी की जेब का हवाला देते थे। अब वह उनके बैंक खाते का जिक्र कर रहे हैं। क्या यह उचित नहीं होगा कि वह इसके सुबूत दे दें कि मोदी ने अनिल अंबानी के किस खाते में कब 30 हजार करोड़ रुपये डाल दिए? चूंकि वह अपने अटपटे आरोपों को लेकर गंभीर नहीं इसलिए अपनी सुविधा से इस रकम को घटाते-बढ़ाते भी रहते हैं। वह कभी 30 हजार करोड़ रुपये का जिक्र करते हैं और कभी 45 हजार करोड़ रुपये का। एक समय वह इस राशि को एक लाख तीस हजार करोड़ बताया करते थे। हाल की एक रैली में तो उन्होंने अनिल अंबानी को चोर भी कह दिया। यह कितना उचित है?

विगत दिवस ही राहुल गांधी और कांग्रेस के अन्य नेता तब तिलमिला उठे थे जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने राजीव गांधी को भ्रष्टाचारी कह दिया था। आखिर जब राहुल गांधी बिना किसी प्रमाण जिस-तिस को चोर कह सकते हैं तो इस सच का जिक्र क्यों नहीं किया जा सकता कि बोफोर्स तोप सौदे में दलाली के आरोपों से राजीव गांधी की छवि तार-तार हो गई थी? क्या कांग्रेस यह नहीं जानती कि बोफोर्स सौदे में दलाली के लेन-देन के सुबूत भी सामने आए थे और इसके भी कि दलाली की रकम किसके खाते में पहुंची? अगर राहुल गांधी यह कहना चाहते हैं कि खुद उन्हें तो हर तरह का झूठ बोलने का अधिकार है, लेकिन अन्य कोई तथ्यों के हवाले से भी कुछ नहीं कह सकता तो एक तरह की सामंतशाही ही है। राहुल गांधी अब यह भी दावा कर रहे हैं कि मोदी ने जनता का पैसा चोरी करके नीरव मोदी और मेहुल चोकसी के खातों में भी डाला। उनकी मानें तो मोदी ने विजय माल्या को भी दस हजार करोड़ रुपये दिए। क्या यह उनकी और उनके साथियों की जिम्मेदारी नहीं कि लोगों को बताएं कि यह काम कब और कैसे हुआ, क्योंकि तथ्य तो यही है कि विजय माल्या को जो अनाप-शनाप कर्ज मिला वह मनमोहन सरकार के समय मिला था। राहुल गांधी अपने इस पुराने दावे को भी जब-तब दोहराते रहते हैं कि मोदी ने अपने चंद मित्र उद्योगपतियों के इतने लाख करोड़ रुपये का कर्ज माफ कर दिया। यह निरा झूठ है, लेकिन समस्या यह है कि राहुल इस तरह का झूठ बोलने में माहिर हो गए हैं। वह यह समझें तो बेहतर कि यह महारत उनका भला नहीं करने वाली।

अच्छी पहल

झारखंड सरकार ग्रीष्मावकाश में भी कमजोर बच्चों को पढ़ाएगी। इस अवधि में ऐसे बच्चों की शिक्षण क्षमता बढ़ाने तथा उन्हें उनके पाठ्यक्रमों में अपडेट करने पर फोकस किया जाएगा। बच्चे इस अवधि में खेलकूद की विविध गतिविधियों में भी शामिल होंगे। सरकार की योजना चिह्नित स्कूलों में इस बाबत समर कैंप लगाने की है, जहां ज्ञानसेतु कार्यक्रम के तहत बच्चों को विशेष मार्गदर्शन मिलेगा। सरकार के इस प्रयास की सराहना की जानी चाहिए। सराहना इसलिए, क्योंकि सामान्य तौर पर गर्मी की छुट्टियों में ऐसी विशेष गतिविधियों का आयोजन अब तक गैर सरकारी स्तरों पर ही होता आया है। इससे इतर शिक्षकों के कुछ संगठन सोशल मीडिया के माध्यम से सरकार के इस आयोजन के विरुद्ध अपनी आवाज बुलंद कर रहे हैं। उनका तर्क है कि ग्रीष्मावकाश के समय अधिसंख्य बच्चे बाहर चले जाते हैं, जबकि एक सर्वे के मुताबिक सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले महज 25 से 27 फीसद सरकारी बच्चे ही इस अवधि में बाहर जाते हैं। ऐसे में शिक्षक संगठनों की इस दलील को कतई सराहा नहीं जा सकता। संगठनों को चाहिए कि वे सरकार के इस आयोजन में न सिर्फ बढ़चढ़कर हिस्सा लें, बल्कि वे अभिभावकों को भी इसके लिए प्रेरित करें। जिलों ने इसकी तैयारियां शुरू कर दी है। ज्ञानसेतु का आयोजन दो स्तरों पर होगा। गैर आवासीय कैंप के तहत संकुल स्तर के एक-एक विद्यालय में यह आयोजन 12 दिनों का होगा। इनमें संबंधित क्षेत्र के स्कूलों के अधिकतम 100 विद्यार्थी हिस्सा लेंगे। इसी तरह राज्य के 203 कस्तूरबा गांधी में आवासीय कैंप लगाए जाएंगे। इन कैंपों में भी 100-100 छात्राएं हिस्सा लेंगी। कैंप पांच दिनों का होगा। दोनों ही स्तर के इन कैंपों में साढ़े तीन घंटे की गतिविधियां संचालित होंगी। इनमें शैक्षणिक कार्यक्रमों के अलावा योग, इनडोर, खेल आदि शामिल हैं। बच्चे सुबह सात बजे से आठ बजे तक खेल गतिविधियों में शामिल होंगे, जबकि आठ से 10 बजे तक ज्ञानसेतु कार्यक्रम का हिस्सा बनेंगे। उम्मीद की जानी चाहिए कि इस आयोजन से सरकारी स्कूलों की प्रतिभा पहचान में आए और यह उन्हें आगे बढ़ने में सहायक होगी। आयोजन की जिम्मेदारी जिन लोगों पर है उन्हें भी इस काम को पूरी संजीदगी से करना चाहिए ताकि एक अच्छी योजना को अंजाम दिया जा सके।

दम तोड़ती वंशवादी राजनीति

एमजे अकबर

इन चुनावों से उभरता एक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि वंशवादी राजनीति श्रीहीन हो रही है। जनता पर उसकी पकड़ ढीली हुई है। मतदाता अब किसी मुगालते में रहने को तैयार नहीं

आम चुनाव की कवायद अपनी गति से आगे बढ़ रही है। आधे से ज्यादा सफर बीत चुका है। नतीजे अभी भी दूर हैं, लेकिन कुछ लोग शायद दीवार पर लिखी इबारत को भांपने के बाद अपने बचाव के तरीके तलाशने में जुट भी गए हैं। इसमें इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन यानी ईवीएम को बलि का बकरा बनाया जा रहा है। हालांकि ईवीएम को लेकर इन चुनावों में ही नहीं, बल्कि बीते कुछ समय से दुष्प्रचार किया जा रहा है। प्रमुख क्षेत्रीय क्षत्रपों में से एक लगभग 'अजेय' माने जाने वाले शरद पवार जब तक अपने राजनीतिक गढ़ बारामती में जीतते रहे तब तक उन्होंने ईवीएम को लेकर कभी शिकायत नहीं की। आम चुनाव के बीच उन्होंने यकायक बयान दिया कि उनके परिवार का अभेद्य किला मानी जाने वाली सीट से अगर उनकी बेटी सुप्रिया सुले हार जाती हैं तो इसके लिए सिर्फ और सिर्फ ईवीएम जिम्मेदार होगी। उन्होंने यहां तक कहा कि अगर ईवीएम उनकी उम्मीदों के अनुरूप तस्वीर पेश नहीं करेगी तो इससे हिंसा भी भड़क सकती है। ऐसा न तो पहली बार हो रहा है और न ही आखिरी बार कि कोई नेता किसी संभावित बुरी खबर को लेकर ऐसा बहाना बना रहा हो। ऐसा प्रतीत होता है कि पवार शायद हवा का रुख भांपने में नाकाम रहे हैं। वह उस दिशा की थाह नहीं ले पा रहे हैं जिधर यह चुनाव जा रहा है। आम चुनावों से उभरता एक महत्वपूर्ण तथ्य यही है कि वंशवादी राजनीति श्रीहीन हो रही है। मतदाताओं पर उसकी पकड़ कमजोर पड़ रही है। यह प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के चुनाव अभियान का प्रत्यक्ष परिणाम है जिसमें उन्होंने इसे केवल सत्तासीन रहे सोनिया-राहुल गांधी राजवंश तक सीमित न रखकर, एक व्यापक अवधारणा के रूप में सामने रखा। पवार इसकी चपेट में आकर होने वाले नुकसान को लेकर आशंकित नजर आते हैं।

हास-परिहास हमेशा से चुनावी बयानबाजी का अहम हिस्सा रहा है। इन दिनों चल रहे चुनावी चुटकुलों में सबसे दिलचस्प कर्नाटक में सुनाया जा रहा है। जनता दल-सेक्युलर के पुरोधा एचडी देवेगौड़ा पर विरोधी चुटकी ले रहे हैं। देवेगौड़ा तुमकुर से चुनावी रण में उतरे हैं जबकि दो सीटों पर उनके पोते चुनाव लड़ रहे हैं। कांग्रेस के साथ गठबंधन के कोटे से उनके हिस्से आई सीटों में लगभग आधी सीटों पर उनके परिवार के लोग मैदान में उतरे हैं। अगर आप इसमें यह तथ्य भी जोड़ लें कि उनके बेटे राज्य के मुख्यमंत्री भी हैं तो यह उपमा अपने चरम पर पहुंच जाएगी। चुटकुला इस तरह है-'भगवान का शुक्र है कि देवेगौड़ा के 28 पोते नहीं हैं, वरना वह राज्य की सभी 28 सीटों पर उन्हें अपनी पार्टी का प्रत्याशी बना देते।'

बंगाल में ममता बनर्जी ने अपनी विभाजनकारी राजनीति से मतदाताओं के एक बड़े वर्ग को विमुख कर दिया है। बंगाल की 70 प्रतिशत आबादी गांवों में बसी है, जहां आर्थिक संकट बुरी तरह से हावी है। ऐसी स्थिति में भी उनकी पार्टी के कार्यकर्ता वहां उगाही में लगे हैं। ममता के खिलाफ बन रहे नकारात्मक माहौल में उनके भतीजे अभिषेक बनर्जी का उभार भी एक प्रमुख कारक है जो उनके पारिवारिक-राजनीतिक वारिस के रूप में सामने आए हैं। प्रधानमंत्री बनने की उनकी हसरत ने उन्हें भी वंशवाद के जाल में फंसा दिया है। ऐसी स्थिति में कोलकाता की गद्दी के लिए वह अपने किसी करीबी रिश्तेदार पर ही एतबार कर सकती हैं। अभिषेक ने शहर के बीचोंबीच एक महलनुमा आलीशान बंगला बनाया है जो मतदाताओं की नजर में भ्रष्टाचार का प्रतीक बन चुका है। मतदाता इस भवन की तुलना ममता बनर्जी की हवाई चप्पलों से कर रहे हैं जिनसे जुड़ी सादगी पर सवार होकर उन्होंने क्रांतिकारी बदलाव के वादे के साथ सत्ता हासिल की थी।

अगर भारतीय राजनीति की सबसे बड़ी और पुरानी राजनीतिक जागीरों की बात करें तो जेहन में निश्चित रूप से अमेठी और रायबरेली जैसी जुड़वां सीटों का नाम आता है जहां से राहुल गांधी और सोनिया गांधी चुनाव लड़ रहे हैं। 1967 के आम चुनाव के पश्चात स्वतंत्र निर्वाचन क्षेत्र के रूप में अस्तित्व में आने के बाद से अमेठी का यह 15वां लोकसभा चुनाव है। यह किसी से छिपा नहीं रहा कि केवल एक चुनाव को छोड़कर अमेठी और रायबरेली ने अमूमन एक जैसा ही जनादेश दिया है। इसमें केवल 1996 का चुनाव अपवाद रहा। जब अमेठी से कांग्रेस के टिकट पर सतीश शर्मा और रायबरेली से भाजपा के चुनाव चिन्ह पर अशोक सिंह संसद पहुंचे थे।

इसका अर्थ यह नहीं कि हमेशा कांग्रेस ही इन दोनों सीटों पर काबिज रही। अक्खड़ समाजवादी नेताओं में गिने जाने वाले राजनारायण ने 1977 के चुनाव में आपातकाल विरोधी सुनामी में इस संसदीय क्षेत्र से श्रीमती इंदिरा गांधी को हराया था। अमेठी सीट से भी गुमनाम से रवींद्र प्रताप सिंह ने जीत हासिल की थी। तब दोनों सीटें जनता पार्टी के खाते में गई थीं। इसी तरह 1998 के चुनाव में भी कांग्रेस ने इन दोनों सीटों को गंवा दिया था। लब्बोलुआब यह है कि अगल-बगल की ये दोनों सीटें जुड़वां जैसा बर्ताव करती हैं। अहम सवाल यही है कि 2019 में क्या होगा?

अमेठी में दमखम के साथ चुनाव लड़ रहीं स्मृति ईरानी के सामने हार के मंडराते संकट को देखकर राहुल गांधी पहले से ही घबरा गए हैं। यह इसी बात से जाहिर हो गया कि उन्होंने मतदाताओं के साथ पत्र के माध्यम से ही संपर्क साधने की कोशिश की और इस इलाके में गहरी जड़ें जमाए गरीबी का जवाब नहीं दिया और अपने लिए केरल में वायनाड के रूप में एक सुरक्षित वैकल्पिक पनाहगाह भी ढूंढ ली। राहुल गांधी के हावभाव को देखते हुए हम अनुमान लगा सकते हैं कि वह अमेठी में हार जाएंगे। इस पर किसी को हैरानी नहीं होनी चाहिए, मगर क्या बगल की रायबरेली सीट पर कोई आश्चर्य संभव है?

कागजों पर तो श्रीमती सोनिया गांधी का पलड़ा ही भारी है। मायावती और अखिलेश यादव ने उनके खिलाफ प्रत्याशी भी नहीं उतारा है। वहीं भाजपा उम्मीदवार भी स्मृति ईरानी जैसा कद्दावर नहीं है। मैं आश्वस्त हूं कि कांग्रेस समर्थक इसे बहुत बड़ी लड़ाई नहीं मानेंगे। उनके मुताबिक रायबरेली में सोनिया गांधी के लिए शायद कोई मुकाबला ही न हो, मगर ऐसा मानना कुछ बुनियादी पहलुओं की अनदेखी करने जैसा होगा। अमेठी में कांग्रेस के खिलाफ बनते माहौल की एक वजह वहां विकास का भारी अभाव है। अमेठी के मतदाताओं को लंबे समय तक भ्रमजाल में रखा गया। वे अब इसके लिए तैयार नहीं कि उनकी ताकत से केवल एक परिवार का भला होता रहे और उनके हालात उत्तर प्रदेश के बाकी हिस्सों से भी बदतर बने रहें। उनकी तुलना में शरद पवार और मुलायम सिंह यादव जैसे वंशवादी नेताओं ने कम से कम अपने निर्वाचन क्षेत्रों का विकास तो किया है, मगर गांधी परिवार के मामले में यह राह एकतरफा ही रह गई है।

(लेखक पूर्व केंद्रीय मंत्री एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

अवधेश राजपूत

शतरंज के प्यादे न बनें सांसद

डॉ. भरत झुनझुनवाला

यह जरूरी है कि सांसद संसद में अपने विवेक के अनुसार किसी बिल का समर्थन या विरोध कर सकें

आधुनिक लोकतंत्र का वैचारिक आधार जीन जैकिस रूसो नामक विचारक ने सत्रहवीं सदी में दिया था। उन्होंने कहा था कि चुनिंदा लोग जनता पर तब तक शासन करें जब तक सुनिश्चित किया जा सके कि वे जनहित में शासन करें। इस विचारधारा के अंतर्गत हमने लोकतंत्र की व्यवस्था बहाल की जिसमें जनता अपने सांसद का चयन करती है और अपेक्षा करती है कि सांसद जनहित में कार्य करेंगे। यह व्यवस्था हमने मूल रूप से इंग्लैंड से ली है। इंग्लैंड के लोकतंत्र में व्हिप की व्यवस्था है। प्रमुख पार्टियों द्वारा किसी विशेष सांसद को व्हिप प्रमुख यानी सचेतक के रूप में नियुक्त किया जाता है। उसकी जिम्मेदारी होती है कि जब संसद में विशेष चर्चा या मतदान हो तब वह अपनी पार्टी के सांसदों को एकजुट कर संसद में पहुंचाए। 'व्हिप' शब्द का अर्थ शिकार से लिया गया है। शिकार के दौरान शिकारी कुत्तों को इधर-उधर भागने से रोकने के लिए कुछ घुड़सवार चाबुक लेकर उन्हें एक साथ रखते थे। इसी प्रकार सांसदों को एकजुट रखने के लिए इंग्लैंड की संसद में व्हिप की व्यवस्था है, लेकिन इंग्लैंड और भारत में एक मौलिक अंतर है। इंग्लैंड में सांसद अपने विवेक से वोट करने को स्वतंत्र हैं। व्हिप प्रमुख की भूमिका मात्र इतनी होती है कि वह मतदान के समय सांसद की उपस्थिति सुनिश्चित करे।

किसी प्रस्ताव पर सांसद किस दिशा में अपने मत का प्रयोग करेगा, इस निर्णय पर सचेतक का कोई अधिकार नहीं होता। इसलिए इंग्लैंड का लोकतंत्र रूसो के विचार के अनुरूप है। सांसद अपने विवेक के अनुसार विषय विशेष पर मत कर सकते हैं। हाल में इंग्लैंड की संसद में यूरोपीय संघ छोड़ने के संबंध में प्रस्ताव लाया गया तो सत्तारूढ़ कंजर्वेटिव पार्टी के तमाम सांसदों ने सरकार के प्रस्ताव के विरोध में मत दिया और वह प्रस्ताव गिर गया। इसी प्रकार अमेरिका में बराक ओबामा द्वारा लागू की गई स्वास्थ्य योजना को हटाने पर मतदान के दौरान कई रिपब्लिकन सांसदों ने अपनी पार्टी के खिलाफ मतदान किया था। तात्पर्य यह है कि लोकतंत्र के मूल चरित्र को बनाए रखने के लिए जरूरी है कि सांसद अपने विवेक के अनुसार मतदान करें। इंग्लैंड और अमेरिका में यह व्यवस्था लागू है।

भारत में 1985 तक पार्टी के सचेतक की भूमिका मात्र सांसदों की संसद में उपस्थिति सुनिश्चित करने की थी। 1985 में दलबदल विरोधी कानून लागू किया गया। कारण था कि तमाम सांसद और विधायक आयाराम-गयाराम की तर्ज पर पार्टियां बदल रहे थे। इसके चलते कोई भी पार्टी स्थिर नहीं रह पा रही थी। शासन की स्थिरता के लिए नियम बनाया गया कि यदि कोई भी सांसद अपनी पार्टी के आदेशों के विपरीत वोट करेगा तो उसकी संसद सदस्यता निरस्त हो जाएगी। यह व्यवस्था भी की गई कि यदि एक तिहाई से कम सदस्यों ने पार्टी छोड़ी तो उनकी सदस्यता समाप्त हो जाएगी। यह व्यवस्था उस सीमा तक ठीक थी जब तक सरकार की स्थिरता का प्रश्न था, लेकिन इस व्यवस्था में एक और नियम जोड़ दिया गया कि पार्टी के किसी भी आदेश के विरुद्ध सदस्य मत नहीं डाल सकते हैं। एक तरह से अपने देश में वह व्यवस्था लागू की गई जो इंग्लैंड में नहीं थी। इसका परिणाम यह हुआ कि सांसदों के विवेक को समाप्त कर दिया गया।

बतौर उदाहरण यदि कोई सांसद भूमि अधिग्रहण कानून को नरम बनाने के विरुद्ध मत डालना चाहता है, लेकिन यदि उसकी पार्टी ऐसा नहीं चाहती तब पार्टी के आदेश के विपरीत मत डालने से सांसद की सदस्यता ही समाप्त हो जाएगी। अर्थात किसी विधेयक पर सांसद अपने विवेकानुसार मत नहीं डाल सकते, बल्कि उन्हें पार्टी के आदेशों के अनुसार वोट डालना होगा। जैसा कि रूसो ने कहा था कि चयनित व्यक्तियों को जनहित में कार्य करना चाहिए, गांधी जी भी इसी दिशा में सोचते थे, परंतु दलबदल विरोधी कानून ने सांसदों के विवेक को पूरी तरह समाप्त कर दिया। नतीजा यह है कि आज जब हम अपने सांसद का चयन कर रहे हैं तो यह समझें कि वे शतरंज के प्यादे के समान हैं। उसका कार्य मात्र इतना है कि संसद में किसी भी मतदान के समय पार्टी के आदेशों के अनुसार वह मत डाले। उसे न सोचने की जरूरत है और न अपने विवेक का उपयोग करने का अधिकार है। यही कारण है कि संसद में आजकल चर्चा का स्तर बहुत गिर गया है। सभी सदस्यों को मालूम है कि चर्चा निरर्थक है। किसी भी प्रस्ताव पर निर्णय पार्टी के मुखिया द्वारा लिया जाता है। यही कारण है कि अपने देश में तमाम जन विरोधी नीतियां लागू की जा रही हैं। जैसे भूमि अधिग्रहण कानून को कमजोर करना अथवा खुदरा बिक्री में विदेशी निवेश की अनुमति देना अथवा गंगा पर पनबिजली परियोजनाओं को स्थापित करना।

अपने देश में राष्ट्रपति के चुनाव में व्हिप लागू नहीं होता। इसमें वोट गुप्त रूप में डाले जाते हैं और विधायक एवं सांसद अपने विवेक का पूर्ण उपयोग करने को स्वतंत्र होते हैं। राज्यसभा के सदस्यों के चुनाव में भी व्हिप लागू नहीं होता है, परंतु वोट सार्वजनिक रूप से डाले जाते हैं जिससे पार्टी के मुखियाओं को पता लगता है कि सदस्य ने वोट पार्टी के प्रत्याशी को दिया या उसके विरोध में। अतः राज्यसभा के सांसदों के चयन में भी सदस्य अपने पूर्ण विवेक का उपयोग नहीं कर पाते हैं। इस समस्या का निदान यह हो सकता है कि व्हिप की व्यवस्था को केवल अविश्वास प्रस्ताव तक सीमित कर दिया जाए। अविश्वास प्रस्ताव उस समय लाया जाता है जब विपक्ष सरकार को गिराने को उद्यत होता है। ऐसी परिस्थिति में यह उचित दिखता है कि सदस्य पर बंदिश हो कि वह पार्टी के हित में अपना मत दे, क्योंकि वह पार्टी के टिकट पर चयनित हुआ है। ऐसा करने से सदस्यों द्वारा सुबह-शाम पार्टी बदलने से उत्पन्न होने वाला संकट समाप्त हो जाएगा, क्योंकि अविश्वास प्रस्ताव में उन पर बंदिश रहेगी कि वे पार्टी के समर्थन में ही वोट डालें।

इसके साथ ही अन्य सभी विषयों पर व्हिप की व्यवस्था को समाप्त कर देना चाहिए जिससे सांसद विभिन्न विषयों पर अपने विवेक के अनुसार अपने मत का प्रयोग कर सकें। ऐसे मुद्दों पर सांसदों द्वारा अपने विवेकानुसार वोट देने से अस्थिरता की स्थिति उत्पन्न नहीं होगी। हम देख रहे हैं कि अमेरिका और इंग्लैंड में इस प्रकार की स्वतंत्रता सांसदों को उपलब्ध है, लेकिन फिर भी वे देश चल ही रहे हैं। हमें भी दलबदल विरोधी कानून में परिवर्तन कर व्हिप को अविश्वास प्रस्ताव तक सीमित कर देना चाहिए। इससे लोकतंत्र की भूमिका और सार्थक होगी।

(लेखक वरिष्ठ अर्थशास्त्री एवं आइआइएम बेंगलूर के पूर्व प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

क्रोध

क्रोध को व्यक्ति का निजी शत्रु माना गया है। कोई व्यक्ति जब क्रोधित होता है तो उसकी अग्नि में वह स्वयं जलता है। गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस के सुंदरकांड अध्याय की चौपाई में 'काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ' में इस ओर इंगित भी किया है। इस दृष्टि से क्रोध की दिशा और दशा किस तरह की है, इस पर भी गौर करने की जरूरत है। क्रोध का वर्गीकरण सकारात्मक तथा नकारात्मक दृष्टि से किया जा सकता है। श्रीराम के वनवास जीवन पर नजर डालने से लगता है कि वह भी लोकहितार्थ क्रोध करते हैं। भाई के साथ ज्यादती के लिए बाली पर तथा कई अन्य दैत्यों के साथ दैत्यराज रावण पर भी क्रोध करते हैं ताकि भूमंडल पर ज्यादती करने वालों का अंत हो। श्रीराम लंका जाने के लिए समुद्रतट पर तीन दिन बैठते हैं और रास्ते के लिए समुद्र पर जब क्रोध करते हैं तब समुद्र उनका स्वागत करता है। भगवान श्रीराम के तीर-धनुष निकाल कर क्रोध करते समुद्र उनकी आरती करने लगा। समुद्र श्रीराम के विनयशील स्वरूप की जगह उनके सैन्य स्वरूप पर प्रसन्न हो जाता है, क्योंकि जिस लंका में रावण वध के लिए वह जा रहे हैं, वहां विनयी श्रीराम की नहीं, बल्कि सेनाध्यक्ष स्वरूप के श्रीराम की जरूरत है।

दैनिक जीवन में देंखे तो माता-पिता भी अपनी संतानों पर जो क्रोध करते हैं, उसका उद्देश्य बदला लेने का नहीं, बल्कि बुराइयों को समाप्त कर संतानों को गढ़ने का होता है। यह सकारात्मक क्रोध या गुस्सा है। जब व्यक्ति अपने अहंकार, प्रभुत्व या किसी को नीचा दिखाने के लिए अनर्गल क्रोध करता है तो वह नकारात्मक श्रेणी का क्रोध होता है। इस तरह का क्रोध बदला लेने की प्रवृत्ति को जगाता है। इस स्थिति में क्रोध व्यक्ति की नस-नाड़ियों के जरिये मन-मस्तिष्क में स्थायी रूप से डेरा जमा लेता है। जो विकृतियां पैदा करता है। नस-नाड़ियों में दौड़ता क्रोध ही नरक ले जाने का पंथ (रास्ता) है। इसलिए नकारात्मक क्रोध से बचना चाहिए तथा अपनों के व्यक्तित्व निर्माण के लिए सकारात्मक क्रोध किए जाने से किसी के जीवन में बुराइयों का अंत होता है तो वह परिवार, समाज तथा मानवता की रक्षा के लिए उपयुक्त भी है। इसलिए व्यक्तित्व निर्माण के लिए किया गया क्रोध या गुस्सा बहुधा लाभदायक भी होता है।

सलिल पांडेय

बाल विवाह का दंश

देवेंद्रराज सुथार

बाल विवाह न केवल बालिकाओं की सेहत के लिहाज से, बल्कि उनके व्यक्तिगत विकास के लिहाज से भी खतरनाक है

हाल ही में संयुक्त राष्ट्र बाल निधि ने एक रिपोर्ट 'फैक्टशीट चाइल्ड मैरिजेज 2019' जारी की है, जिसके अंतर्गत कहा गया है कि भारत के कई क्षेत्रों में अब भी बाल विवाह हो रहा है। रिपोर्ट में कहा गया है कि बालिका शिक्षा की दर में सुधार, किशोरियों के कल्याण के लिए सरकार द्वारा किए गए निवेश एवं कल्याणकारी कार्यक्रम और इस कुप्रथा के खिलाफ सार्वजनिक रूप से प्रभावी संदेश देने जैसे कदमों के चलते बाल विवाह की दर में कमी देखने को मिली है, लेकिन अब भी पूर्णरूप से कामयाबी नहीं मिली है। बिहार, बंगाल और राजस्थान में यह प्रथा अब भी जारी है। यूनिसेफ की रिपोर्ट के अनुसार यह कुप्रथा आदिवासी समुदायों और अनुसूचित जातियों सहित कुछ विशेष जातियों के बीच प्रचलित है। रिपोर्ट के अनुसार 2005-2006 में जहां 47 फीसद लड़कियों की शादी 18 साल की उम्र से पहले हो गई थी, वहीं 2015-2016 में यह आंकड़ा 27 फीसद था।

यह रिपोर्ट हमारे सामाजिक जीवन के उस स्याह पहलू की ओर इशारा करती है, जिसे अक्सर हम रीति-रिवाज एवं परंपरा के नाम पर अनदेखा करते हैं। तीव्र आर्थिक विकास, बढ़ती जागरूकता और शिक्षा का अधिकार कानून लागू होने के बाद भी अगर यह हाल है तो जाहिर है कि बालिकाओं के अधिकारों और कल्याण की दिशा में अभी काफी कुछ किया जाना शेष है। बाल विवाह न केवल बालिकाओं की सेहत के लिहाज से, बल्कि उनके व्यक्तिगत विकास के लिहाज से भी खतरनाक है। इससे शिक्षा के द्वार भी हमेशा के लिए बंद हो जाते हैं। शिक्षा से वंचित रहने के कारण वे अपने बच्चों को शिक्षित नहीं कर पातीं और फिर कच्ची उम्र में गर्भधारण के चलते उनकी जान को भी खतरा बना रहता है। कच्ची उम्र में मां बनने वाली ये बालिकाएं न तो परिवार नियोजन के प्रति सजग होती हैं और न ही नवजात शिशुओं के उचित पालन पोषण में दक्ष। कुल मिलाकर बाल विवाह का दुष्परिणाम व्यक्ति, परिवार को ही नहीं, बल्कि समाज और देश भी भोगना पड़ता है। जनसंख्या में वृद्धि होती है जिससे विकास कार्यों में बाधा आती है। यह सोचकर बड़ा अजीब लगता है कि वह भारत जो अपने आप में एक महाशक्ति के रूप में उभर रहा है उसमें आज भी ऐसी अनुचित प्रथा जीवित है।

वैसे हमारे देश में बाल विवाह रोकने के लिए कानून सर्वप्रथम 1929 में पारित किया गया था। बाद में 1949, 1978 और 2006 में इसमें संशोधन किए गए। बाल विवाह निषेध अधिनियम 2006 के तहत बाल विवाह कराने पर दो साल की जेल और एक लाख रुपये का दंड निर्धारित किया है। हमें समझना होगा कि बाल विवाह एक सामाजिक समस्या है। अतः इसका निदान सामाजिक जागरूकता से ही संभव है। लिहाजा समाज को आगे आना होगा तथा बालिका शिक्षा को और बढ़ावा देना होगा। बच्चों के अधिकारों को लेकर सजग होना पड़ेगा। इसके लिए स्कूल, घर, सिनेमा और मीडिया समेत सभी संस्थाओं को अपना योगदान देने की जरूरत है। तमाम सरकारी, गैर-सरकारी संस्थाओं को बचपन को बाल विवाह की बेड़ियों से मुक्त करने के लिए आगे आना ही होगा।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

मेलबाक्स

अधकचरी समझ

वैचारिक दुराग्रह से पीड़ित वामपंथी शीर्षक से लिखे अपने लेख में हृदयनारायण दीक्षित ने मार्क्सवादियों का बौद्धिक कच्चा चिट्ठा खोला है। दूसरे विश्व युद्ध के दौरान भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी ने महान देशभक्त नेताजी सुभाष चंद्र बोस के लिए हर तरह के अपशब्दों का प्रयोग किया था। प. बंगाल की मार्क्सवादी सरकार ने स्कूलों में बच्चों को सदा पढ़ाया कि चंद्रशेखर आजाद, भगत सिंह, राजगुरु, सुखदेव फासिस्ट थे। 2000 के बाद उन्हें समझ आया कि उनके ये वैचारिक दुराग्रह उनके अपने विस्तार में घोर बाधक हैं, वे उन्हें अलोकप्रिय बना रहे हैं। तब उन्होंने लाइन पलटी और इन राष्ट्रवादी क्रांतिकारियों का गुणगान वामपंथी बताकर करने लगे। अब सीताराम येचुरी हिंदुओं को हिंसक बता रहे हैं, क्योंकि उनके अनुसार रामायण-महाभारत में बहुत हिंसा है। यह अधकचरी समझ है। येचुरी का ध्यान उस हिंसा को रोकने के उन प्रयासों पर नहीं गया, जिनका वर्णन वाल्मीकि तथा वेदव्यास ने विस्तार से किया है। रामायण में युद्ध को टालने के लिए हनुमान और अंगद के रूप में दो-दो दूत श्रीराम की ओर से रावण के पास भेजे गए। उन्होंने राक्षसराज को समझाने के भरसक प्रयास किए। विभीषण ने भी अपना सुलह का स्वर मिलाया, पर रावण अनीति पर अड़ा रहा। अतः युद्ध अनिवार्य हो गया। महाभारत में स्वयं श्रीकृष्ण ने कौरव दल में जाकर युद्ध रुकवाने की कोशिश की। उनसे पहले विदुर आदि अनेक नीतिवान विद्वान भी प्रयास कर चुके थे, पर जिनके सिर पर काल सवार है, वे कब मानने वाले हैं? श्रीकृष्ण का तो हिंसा के संबंध में जो दृष्टिकोण था वह शिशुपाल के प्रसंग से स्पष्ट होता है। उसने जब तक 100 अपराध नहीं कर लिए, श्रीकृष्ण ने उस पर वार नहीं किया। शर-शैय्या पर लेटे भीष्म पितामह अनुशासन पर्व में युधिष्ठिर को उपदेश देते हुए कहते हैं-अहिंसा परमो धर्मः। निष्कर्ष यह है कि दोनों कथाओं में शांति के लिए दमदार कोशिशों के असफल होने के बाद ही युद्ध हुआ है। और युद्ध में भाग लेने वाले भी अहिंसा को सर्वोपरि मानते हैं। फिर दोनों युद्ध कहीं से भी धार्मिक, सांप्रदायिक या मजहबी कारणों से नहीं, बल्कि सामाजिक अन्याय मिटाने के लिए हुए हैं। आज के युद्धों से उनका कोई मेल नहीं बैठता। मार्क्सवादी अपनी निम्न सोच इस देश के चिंतन पर थोपने की चेष्टा न करें।

अजय मित्तल, मेरठ

भरोसे लायक नहीं चीन-पाक

बेशक चीन की सहमति के बाद संयुक्त राष्ट्र ने जैश के कुख्यात सरगना मसूद अजहर को वैश्विक आतंकी घोषित कर दिया हो, लेकिन पाकिस्तान पर भरोसा नहीं किया जा सकता। वहीं चीन भी भरोसे के काबिल नहीं है। इससे पहले पाकिस्तान में पल रहे आतंकी सरगना हाफिज सईद पर भी ऐसे ही प्रतिबंध लगाए गए थे, लेकिन वह आज भी खुला घूमता है और भारत के खिलाफ जहर उगलता रहता है। पाकिस्तान के टीवी चैनल उसका गुणगान करते हैं। इतना ही नहीं, उसने राजनीतिक पार्टी बनाई और उसे पाकिस्तान के आम चुनाव में उतार दिया। यह अलग बात है कि उसकी पार्टी को एक भी सीट नहीं मिली। उस पर प्रतिबंध लगाने से बस इतना ही बदलाव आया कि लश्कर-ए-तैयबा का नाम बदल करजमात उल दावा हो गया। मुंबई हमले के आरोपित हाफिज पर पाकिस्तान ने भारत द्वारा दिए गए सुबूतों के बावजूद आज तक कोई कार्रवाई नहीं की और मामला पाकिस्तान की अदालतों में दफन होकर रह गया। इन परिस्थितियों में पाकिस्तान पर विश्वास नहीं होता कि वह मसूद अजहर पर कोई समुचित कार्रवाई कर सकेगा। जहां तक चीन का प्रश्न है तो उसने अंतरराष्ट्रीय समुदाय में अपनी छवि को धूमिल होने से बचाने के लिए अपना वीटो वापस ले लिया। चीन व्यापारी मुल्क है वह पाकिस्तान में अपने ह